रूसी कहानी

लेव तोल्सतोय

नाच-पार्टी के बाद

नाच-पार्टी के बाद (रूसी कहानी) : लेव तोल्सतोय (हिंदी कहानी)

नाच-पार्टी के बाद (रूसी कहानी) : लेव तोल्सतोय

Naach-Party Ke Baad (Russian Story in Hindi) : Leo Tolstoy

"आपका कहना है कि मनुष्य अपने आप तो भले-बुरे को नहीं समझ सकता, सब कुछ परिस्थितियों पर निर्भर करता है, मनुष्य परिस्थितियों की उपज होता है। मैं यह नहीं मानता। मैं समझता हूँ कि सब संयोग का खेल है। कम से कम अपने बारे में तो मुझे ऐसा ही लगता है।"

हमारे बीच बहस चल रही थी। कहा गया कि मनुष्य के चरित्र को सुधारने से पहले जीवन की परिस्थितियों को सुधारना ज़रूरी है। बहस के ख़ात्मे पर ये शब्द हमारे दोस्त इवान वसील्येविच ने कहे, जिनका हम सब बड़ा मान करते थे। सच तो यह है कि बहस के सिलसिले में किसी ने भी यह नहीं कहा था कि हम स्वयं ही भले और बुरे का अन्तर नहीं समझ सकते। पर इवान वसील्येविच की कुछ ऐसी आदत थी कि बहस की गरमागरमी में

जो सवाल उनके अपने मन में उठते, वह उन्हीं के जवाब देने लगते और उन्हीं विचारों से सम्बन्धित अपने जीवन के अनुभव सुनाने लगते। किसी घटना की चर्चा करते समय अक्सर वह इस तरह खो जाते कि उन्हें चर्चा के उद्देश्य का भी ध्यान नहीं रहता था। घटनाएँ वह सदा बड़े उत्साह और निश्छलता से सुनाते थे। इस बार भी ऐसा ही हुआ।

"कम से कम अपने बारे में तो मैं यही कहूँगा। मेरे जीवन को ढालने में परिस्थितियों का नहीं, बल्कि किसी दूसरी ही चीज़ का हाथ रहा।"

"किस चीज़ का?" हमने पूछा।

"यह एक लम्बी दास्तान है। अगर आप यह समझना चाहते हैं, तो मुझे कहानी शुरु से आख़िर तक सुनानी पड़ेगी।"

"तो सुनाइये न।"

इवान वसील्येविच ने क्षण-भर सोचकर सिर हिलाया।

"तो ठीक है," वह बोले, "मेरे सारे जीवन का रुख़ एक रात, या यों कहें एक सुबह में ही बदल गया।"

"वह कैसे?"

"हुआ यह कि मैं एक लड़की से प्रेम करने लगा था। इससे पहले भी मैं कई बार प्यार कर चुका था, पर रंग इतना गाढ़ा कभी न हुआ था। यह बात बहुत पहले की है, अब तो उसकी बेटियों तक की भी शादियाँ हो चुकी हैं। उसका नाम था ब.

वारेन्का ब.।" इवान वसील्येविच ने उसका पूरा नाम बताया। "पचास बरस की उम्र में भी वह देखते ही बनती थी, पर उस समय तो वह केवल अठारह वर्ष की थी और ग़ज़ब ढाती थी - ऊँचा-लम्बा, साँचे में ढला-सा छरहरा बदन, भव्य और रोबीला व्यक्तित्व। हाँ, रोबीला! वह सदा इस तरह तनी रहती, मानो झुकना उसके लिए असम्भव हो। उसका सिर ज़रा-सा पीछे की ओर अकड़ा रहता और इससे दुबली-पतली, यहाँ तक कि हाड़-हड़ीली होने के बावजूद अपने शानदान क़द की सुन्दरता के बदौलत रानी-सी लगती। उसकी रोबीली चाल-ढाल से अगर उसके होंठों पर हर वक़्त लुभावनी, मधुर मुस्कान न खेलती रहती, उसकी बेहद ख़ूबसूरत और हर वक़्त दमकती आँखें न होतीं तथा यदि उसमें जवानी का अदम्य आकर्षण न होता, तो उसका रोबीला व्यक्तित्व भय उपजाता।"

"क्या तस्वीर खींच रहे हैं इवान वसील्येविच। कविता!"

"चाहे कैसी भी तस्वीर क्यों न खींचूँ, पर उसका सौन्दर्य मैं उसमें बाँध नहीं सकता। ख़ैर, यह एक दूसरी बात है। इसका मेरी कहानी से कोई सम्बन्ध नहीं। जिन घटनाओं का मैं ज़िक्र करने जा रहा हूँ, वे 1840 के आसपास घटीं। उस समय मैं एक प्रान्तीय विश्वविद्यालय में पढ़ता था। मैं नहीं जानता कि बात अच्छी थी या बुरी, पर जो बहस-मुबाहिसे और गोष्ठियाँ आजकल होती हैं, वे उन दिनों हमारे विश्वविद्यालय में नहीं होती थीं। हम बस, जवान थे और जवानों की तरह रहते थे - पढ़ते-पढ़ाते और जीवन का रस लूटते। मैं उन दिनों बड़ा मौजी और

हट्टा-कट्टा युवक था। इस पर तुर्रा यह कि अमीर भी था। मेरे पास एक बढ़िया घोड़ा था। मैं लड़कियों के साथ बर्फ़-गाड़ी में बैठकर पहाड़ों की ढलानों पर से फिसलने जाया करता था (तब स्केटिंग का फ़ैशन नहीं चला था)। पीने-पिलाने की पार्टियों में भी मैं अपने विद्यार्थी दोस्तों के साथ जाता था (उन दिनों हम शैम्पेन के अतिरिक्त और कुछ नहीं पीते थे। अगर जेब ख़ाली होती तो हम कुछ भी न पीते। आजकल की तरह वोद्का तो हम छूते भी नहीं थे)। नाचना और पार्टियों में जाना मुझे सबसे अधिक अच्छा लगता था। मैं बहुत अच्छा नाचता था और देखने में भी बुरा न था।"

"इतनी नम्रता किसलिए दिखा रहे हैं?" एक महिला ने चुटकी ली। "हम सबने आपकी उन दिनों की तस्वीर देखी है। आप तो बड़े बाँके जवान थे।"

"शायद रहा हूँगा, पर मेरे कहने का यह मतलब नहीं था। मेरा प्रेम नशे की हद तक जा पहुँचा। एक दिन मैं एक नाच-पार्टी में गया। इस पार्टी का आयोजन श्रोवटाइड के आख़िरी दिन गुबेर्निया के रईसों के मुखिया ने किया था। रईसों का मुखिया बड़े अच्छे स्वभाव का बूढ़ा आदमी था। अमीर था, कामिरहैर की उपाधि प्राप्त था और इस तरह की पार्टियाँ करने का ख़ासा शौक़ीन था। उसकी पत्नी भी ऐसे ही अच्छे स्वभाव की थी। जब मैं उनके घर पहुँचा, तो वह मेहमानों का स्वागत करने के लिए पति के साथ दरवाज़े पर खड़ी थी। मख़मली गाउन पहने और सिर पर हीरों की छोटी-सी जड़ाऊ टोपी ओढ़े हुए। कन्धे उघड़े

हुए थे, उसी तरह जैसे तस्वीरों में चित्रित महारानी येलिज़ावेता पेत्रोव्ना के। उसकी छाती और कन्धे गोरे और गुदगुदे थे और उनपर बढ़ती उम्र के चिह्न नज़र आने लगे थे। नाच-पार्टी बहुत शानदार रही। हॉल गैलरी वाला था। उस ज़माने के मशहूर साज़िन्दे मौजूद थे। वे संगीत-रसिक ज़मींदार के भू-दास थे। खाने को बहुत कुछ था। और शैम्पेन की तो जैसे नदियाँ बह रही थीं। शैम्पेन का बहुत शौक़ीन होते हुए भी मैंने वह नहीं पी - मुझे प्रेम का नशा जो था! मैं इतना नाचा, इतना नाचा कि थककर चूर हो गया। मैंने हर तरह के नाच में भाग लिया - क्वाड्रिल, वाल्ज़ और पोल्का में। और यह कहने की ज़रूरत नहीं कि मैं सबसे अधिक वारेन्का के साथ नाचा। वह सफ़ेद गाउन और गुलाबी रंग का कमरबन्द पहने थी। हाथों पर बढ़िया चमड़े के दस्ताने थे, जो लगभग उसकी नुकीली कोहनियों तक पहुँचते थे, पाँवों में सफ़ेद रेशमी जूते थे। मज़ूर्का नाच के वक़्त अनीसिमोव नाम का कमबख़्त एक इंजीनियर मेरे साथ दाँव खेल गया और वारेन्का के साथ नाचने लगा। इसके लिए मैंने उसे आज तक माफ़ नहीं किया। ज्यों ही वह हॉल में आयी, वह उसके पास जा पहुँचा और उससे नाचने का प्रस्ताव किया। मुझे पहुँचने में थोड़ी देर हो गयी थी: मैं पहले हेयर-ड्रेसर के पास, फिर दस्ताने ख़रीदने चला गया था। इसलिए वारेन्का के बजाय एक जर्मन लड़की के साथ, जिस पर कभी मेरा थोड़ा मन आया रहा था, मुझे मज़ूर्का नाचना पड़ा। मैं सोचता हूँ कि उस शाम मैं उस लड़की के साथ बहुत बेरुखी से पेश आया। मैंने न तो उससे

कोई बात की और न उसकी तरफ़ देखा ही। मेरी आँखें तो दूसरी ही लड़की पर गड़ी थीं - वही लड़की जिसका क़द ऊँचा और बदन छरहरा और नाक-नक़्शा साँचे में ढला-सा था और जिसके बदन पर सफ़ेद गाउन ओर गुलाबी कमरबन्द था। उसके गालों में ग़ुल पड़ते थे, चेहरे पर उत्साह और ख़ुशी की लाली थी और आँखों में मृदुता छलकती थी। केवल मेरी ही नहीं, सभी की आँखें उस पर जमी थीं। यहाँ तक कि स्त्रियाँ भी उसी को निहार रही थीं। बाक़ी सभी स्त्रियाँ उससे हेच लगती थीं। उसके सौन्दर्य से प्रभावित हुए बिना कोई रह ही नहीं सकता था।

"क़ायदे से देखा जाये, तो मज़ूर्का नाच के मामले में मैं उसका जोड़ीदार नहीं था, फिर भी ज़्यादा वक़्त मैंने उसी के साथ नाचने में बिताया। किसी झेंप-संकोच के बिना वह सारा कमरा लाँघती और सीधी मेरी ओर चली आती। मैं भी निमन्त्रण का इन्तज़ार किये बिना उछलकर उसके पास जा पहुँचता। वह मुस्कुराती, मैं उसके दिल की बात भाँप जाता, इसके लिए वह मुस्कुराकर मुझे धन्यवाद देती। पर जब वह मेरा गुप्त नाम न बूझ पाती, तो अपने दुबले-पतले कन्धे झटकती, अपना हाथ दूसरे पुरुष की ओर बढ़ा देती, फिर मेरी ओर देखकर तनिक मुस्कुराती, मानो अफ़सोस कर रही हो और मुझे ढाढ़स बँधा रही हो। मज़ूर्का में वाल्ज़ आया, तो मैं बड़ी देर तक उसके साथ नाचता रहा। नाचते-नाचते उसकी साँस फूलने लगती, वह मुस्कुराती और धीमे-से कहती "encore"(एक बार और (फ़्रांसीसी)) मैं उसके साथ नाचता जाता। मुझे लगता जैसे कि मैं हवा में तैर रहा हूँ,

मुझे अपने शरीर के अस्तित्व की अनुभूति तक न होती।"

"वाह, अनुभूति तक नहीं होती थी, ख़ूब अनुभूति होती होगी, जब उसकी कमर में हाथ डालते होगे। तो अपने ही नहीं, उसके शरीर की भी अनुभूति होती होगी," एक मेहमान ने चुटकी ली।

इवान वसील्येविच का चेहरा सहसा तमतमा उठा और उसने ऊँची आवाज़ में कहा -

"यह तुम अपनी, आजकल के युवकों की बात कर रहे हो। तुम लोग शरीर के सिवा किसी और चीज़ के बारे में सोच ही नहीं सकते। हमारा ज़माना ऐसा नहीं था। ज्यों-ज्यों हमारा प्रेम किसी लड़की के लिए गहरा होता जाता था, हमारी नज़रों में उसका रूप एक देवी के समान होता जाता था। आज तुम्हें केवल टाँगें और टखने और शरीर के अंग-प्रत्यंग ही नज़र आते हैं। तुम्हारी दिलचस्पी केवल अपनी प्रेमिका के नंगे शरीर में रह गयी है। पर मैं, जैसे अलफ़ोंस कार्र ने लिखा है - सच मानो, वह बहुत अच्छा लेखक था - अपनी प्रेयसी को सदा काँसे के वस्त्रों में देखा करता था। उसे उघाड़ने के बजाय हम सदा, नूह के नेक बेटे के समान, उसे छिपाने की चेष्टा किया करते थे, पर यह बात तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी..."

"इसकी बातों की परवाह न कीजिये, आप अपनी कहते जाइये," एक अन्य श्रोता ने कहा।

"हाँ, तो मैं उसके साथ नाचता रहा, मुझे वक़्त का कोई अन्दाज़ न रहा। साज़िन्दे बुरी तरह थक गये थे - आप तो जानते हैं कि

नाच के ख़ात्मे पर क्या हालत होती है - वे मज़ूर्का की ही धुन बजाते रहे थे। इसी बीच बैठक में ताश खेल रहे बुज़ुर्ग, स्त्रियाँ और दूसरे लोग उठ-उठकर खाने की मेज़ों की ओर जाने लगे थे। नौकर-चाकर इधर-उधर भाग-दौड़ रहे थे। तीन बजने को हुए। हम इने-गिने बाक़ी मिनटों का रस निचोड़ लेना चाहते थे। मैंने फिर उससे नाचने का आग्रह किया और हम शायद सौवीं बार कमरे के एक सिरे से दूसरे सिरे तक नाचते चले गये।

"'भोजन के बाद मेरे साथ क्वाड्रिल नाचोगी न?' उसे उसकी जगह पर पहुँचाते हुए मैंने पूछा।

"'ज़रूर, अगर माँ-बाप मुझे घर न ले गये', उसने मुस्कुराते हुए कहा।

"'मैं उन्हें ऐसा नहीं करने दूँगा,' मैंने कहा।

"'मेरा पंखा तो दीजिये,' वह बोली।

"'देते हुए अफ़सोस होता है,' उसका सस्ता-सा सफ़ेद पंखा उसके हाथ में देते हुए मैंने कहा।

"'अफ़सोस न हो, इसलिए यह ले लो,' उसने कहा और एक पंख तोड़कर मुझे दे दिया।

"मैंने पंख ले लिया। मेरा दिल बल्लियों उछलने लगा और रोम-रोम उसके प्रति कृतज्ञ हो उठा। मेरे मुँह से एक शब्द भी न निकला। आँखों ही आँखों में मैंने अपने दिल का भाव जताया। उस समय मुझे असीम सुख और आनन्द का अनुभव हो रहा था।

मेरा दिल जाने कितना बड़ा हो उठा था। मुझे लगा जैसे मैं पहले वाला युवक ही नहीं रहा। मुझे अनुभव हुआ कि मैं किसी दूसरे लोक का प्राणी हूँ, जो कोई पाप नहीं कर सकता, केवल नेकी ही नेकी कर सकता है। मैंने वह पंख अपने दस्ताने में छिपा लिया और वहीं उसके पास खड़ा रह गया, मेरे पाँव जैसे कील उठे।

"'वह देखो, वे लोग मेरे पिता जी से नाचने का आग्रह कर रहे हैं,' उसने एक ऊँचे-लम्बे, सुघड़-सुडौल आदमी की तरफ़ इशारा करते हुए कहा। कन्धों पर चाँदी के झब्बे लगाये कर्नल की वर्दी पहने, वह घर की मालकिन तथा अन्य महिलाओं के साथ दरवाज़े के पास खड़ा था।

"'वारेन्का, इधर आओ,' सिर पर जड़ाऊ टोपी ओढ़े और महारानी येलिज़ावेता जैसे कन्धों वाली घर की मालकिन ने कहा।

"वारेन्का दरवाज़े की ओर जाने लगी तो मैं भी उसके पीछे-पीछे हो लिया।

"'अपने पिता से कहो, ma chere,(मेरी प्यारी (फ़्रांसीसी)) कि तुम्हारे साथ नाचें।' फिर कर्नल की ओर घूमकर मालकिन बोली, 'कृपया नाचिये, प्योत्र व्लादीस्लावोविच।'

"वारेन्का का पिता ऊँचा-लम्बा ख़ूबसूरत, सुडौल तथा ताज़गी लिये बुज़ुर्ग व्यक्ति था। जान पड़ता था कि उसकी तन्दुरुस्ती का पूरा-पूरा ख़याल रखा जाता है। दमकता चेहरा, a la Nicolas

1 (ज़ार निकोलाई प्रथम की तरह (फ़्रांसीसी)) ऐंठी हुई सफ़ेद मूँछें, सफ़ेद ही क़लमें, जो मूँछों से जा मिली थीं। आगे की ओर कढ़े हुए बालों ने कनपटियाँ ढँक रखी थीं। चेहरे पर लुभावनी, मधुर मुस्कुराहट - बेटी के समान। वह मुस्कुराता तो उसकी आँखें चमक उठतीं और होंठ खिल उठते। शरीर उसका बड़ा ख़ूबसूरत था, फ़ौजी अफ़सरों की तरह चौड़ी, आगे को उभरी हुई छाती और उस पर कुछेक तमग़े, कन्धे मज़बूत, टाँगें लम्बी और गठी हुईं। वह पुराने ढंग का फ़ौजी अफ़सर था। उसकी चाल-ढाल निकोलाई प्रथम के ज़माने के अफ़सरों की-सी थी।

"हम दरवाज़े के पास पहुँचे तो कर्नल को यह कहकर इंकार करते सुना कि 'मुझे नाचने-वाचने का अभ्यास नहीं रहा'। इस पर भी उसने मुस्कुराते हुए पेटी से तलवार उतारी, पास खड़े एक सेवापरायण युवक को थमा दी, अपने दायें हाथ पर चमड़े का दस्ताना चढ़ाया: 'सब बात नियम के अनुसार होनी चाहिए,' उसने मुस्कुराते हुए कहा और फिर अपनी बेटी का हाथ अपने हाथ में लेकर, थोड़ा-सा घूमकर नाचने की मुद्रा में खड़ा होकर संगीत का इन्तज़ार करने लगा।

"मज़ूर्का की धुन बजने लगी। कर्नल ने एक पाँव से फ़र्श पर ज़ोर से ठोंका दिया और दूसरा पाँव तेज़ी से घुमाकर नाचने लगा। उसकी ऊँची-लम्बी देह कमरे में वृत्त-से बनाती हुई थिरकने लगी। कभी धीरे-धीरे, बड़े बाँकपन से और कभी तेज़-तेज़, ज़ोर से वह एड़ियाँ ठकोरता। वारेन्का लता की तरह लचीली, उसके साथ-साथ तैरती, सफ़ेद रेशमी जूतों वाला पैर

उठाती और ताल पर अपने पिता के क़दमों के साथ-साथ कभी लम्बे डग भरती, तो कभी छोटे। सभी मेहमानों की निगाहें उनके एक-एक अंगविक्षेप पर गड़ी रहीं। मेरे हृदय में उस समय सराहना से अधिक गहरे आनन्द की भावना रही। कर्नल के बूट देखकर तो मेरा मन जैसे द्रवित हो उठा। यों तो वे बढ़िया बछड़े के चमड़े के बने थे, परन्तु पंजे फ़ैशन के अनुसार नुकीले नहीं, चपटे थे। ज़ाहिर था कि उन्हें फ़ौज के मोची ने बनाया था। 'कर्नल फ़ैशनदार नहीं, घर के बने साधारण बूट पहनता है, ताकि अपनी चहेती बेटी को अच्छे से अच्छे कपड़े पहना सके और उसे सोसाइटी में ले जा सके,' मैंने मन ही मन सोचा। इसी कारण कर्नल के बूटों को देखकर मेरा मन द्रवित हुआ था। कर्नल किसी ज़माने में ज़रूर ही अच्छा नाचता रहा होगा। अब उसका शरीर बोझिल हो गया था, टाँगों में भी वह लोच न रह गयी थी, वह तेज़ और नाज़ुक मोड़ न ले सकता था, पर कोशिश ज़रूर कर रहा था। फिर भी उसने फ़ुर्ती के साथ हॉल का दो बार चक्कर लगाया। इसके बाद उसने अपने दोनों पाँव तेज़ी से खोले, फिर सहसा उन्हें एकसाथ जोड़कर कुछ कठिनाई के साथ एक घुटने के बल बैठ गया और वारेन्का मुस्कुराते हुए कर्नल के घुटने के नीचे आ गये स्कर्ट को छुड़ाकर बड़े बाँकपन से नाचती हुई कर्नल के इर्द-गिर्द घूम गयी। सभी ने ज़ोर से तालियाँ बजायीं। कर्नल को थोड़ी-सी कठिनाई का अनुभव हुआ, मगर वह उठा और बड़े प्यार से दोनों हाथों में अपनी बेटी का मुँह लेकर उसका माथा चूमा। फिर वह मुझे अपनी बेटी का

नाच का साथी मानते हुए उसे मेरी ओर ले आया। पर मैंने कहा कि मैं उसका नृत्य-साथी नहीं हूँ। इस पर वह दुलार से मुस्कुराया और अपनी तलवार पेटी में बाँधते हुए बोला:

"‘कोई बात नहीं, अब तुम इसके साथ नाचो।’

"जिस तरह शराब की बोतल से पहले कुछ बूँदें रिसती हैं। और फिर धारा फूट निकलती है, ठीक वैसे ही मेरे अन्तर से वारेन्का के प्रति प्यार उमड़ पड़ा। इस प्यार ने सारे विश्व को आलिंगन में भर लिया। हीरों की टोपी और उभरी हुई छाती वाली घर की मालकिन, गृह-स्वामी, मेहमानों, नौकर-चाकरों और मुझसे नाराज़ इंजीनियर अनीसिमोव - सभी के प्रति मैंने असीम अनुराग का अनुभव किया। वारेन्का के पिता के प्रति, जिसने घर के बने चपटे पँजों वाले बूट पहन रखे थे और जिसकी मधुर मुस्कान अपनी बेटी की मुस्कान से बहुत मिलती-जुलती थी, मैं उल्लासपूर्ण स्नेह-भाव अनुभव कर रहा था।

"मज़ूर्का समाप्त हुआ। मेज़बानों ने हमें भोजन के लिए आमन्त्रित किया। परन्तु कर्नल ब. खाने की मेज़ पर नहीं आया। बोला, ‘मैं अब और न रुक सकूँगा, क्योंकि मुझे कल सुबह जल्दी उठना है।’ मुझे आशंका हुई कि वह वारेन्का को भी अपने साथ ले जायेगा, पर वारेन्का अपनी माँ के साथ रुक गयी।

"भोजन के बाद मैं वारेन्का के साथ क्वाड्रिल नाचा जिसका उसने मुझे पहले से वचन दे रखा था। मैं समझ रहा था कि मेरी ख़ुशी चरम सीमा तक जा पहुँची है। पर नहीं, अब वह और भी अधिक

बढ़ने लगी और क्षण-प्रतिक्षण बढ़ती गयी। हमने प्रेम की कोई बात नहीं की। वह मुझसे प्रेम करती है या नहीं, यह एक सवाल ही बना रहा। पर इस विषय में मैंने न तो उससे कुछ पूछा और न अपने मन से ही। मैं प्रेम करता हूँ, यह मैंने अनुभव किया और मेरे लिए इतना ही काफ़ी था। डर था तो केवल इस बात का कि मेरे सौभाग्य पर कहीं कोई छाया न पड़ जाये।

"मैं घर पहुँचा, कपड़े बदले और सोने की तैयारी करने लगा, मगर नींद कहाँ? हाथ में अभी तक वह पंख और वारेन्का का दस्ताना था। दस्ताना उसने मुझे अपनी माँ के साथ बग्घी में चढ़ते समय दिया था। इन चीज़ों पर निगाह पड़ते ही मुझे उसका चेहरा याद हो आता था। या तो उस समय का, जब नाच के लिए दो पुरुषों में से चुनते हुए उसने मेरा गुप्त नाम बूझ लिया था और मधुर स्वर में कहा था, 'गर्व है न तुम्हारा नाम? और ख़ुश होते हुए हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया था या फिर भोजन के समय का, जब शैम्पेन के छोटे-छोटे घूँट भरते हुए उसने गिलास के ऊपर से मेरी ओर स्नेहपूर्वक देखा था। किन्तु सबसे अधिक तो मैं उसे अपने पिता के साथ नाचते हुए देखता था, उसके साथ-साथ तैरती-सी और अपने प्रशंसकों की ओर गर्व और उल्लास से देखती हुई। यह गर्व और उल्लास का भाव जितना अपने प्रति था, उतना ही अपने पिता के प्रति भी। दोनों प्राणी, अपने आप ही, बिना किसी चेष्टा के मेरे दिल में समा गये थे और मुझे उनसे स्नेह हो गया था।

"मेरे भाई का देहान्त हो चुका है, पर उस समय हम दोनों

एकसाथ रहते थे। मेरे भाई की सोसाइटी में कोई रुचि नहीं थी और वह नाच-पार्टियों में कभी नहीं जाते थे। उन दिनों स्नातक-परीक्षा की तैयारी कर रहे थे और बड़ा आदर्श-जीवन बिताते थे। उस समय वह तकिये पर सिर रखे गहरी नींद सो रहे थे। आधा चेहरा कम्बल से ढँका था। उन्हें देखकर मेरा दिल दया से भर उठा। वह मेरे सुख से अनभिज्ञ थे और मैं उन्हें उसका भागीदार भी नहीं बना सकता था। मेरा नौकर, पेत्रूशा, मोमबत्ती जलाकर ले आया और कपड़े बदलवाने लगा। लेकिन मैंने उसे भेज दिया। उसकी आँखें नींद से घुटी जा रही थीं और बाल बिखरे हुए थे। वह मुझे बहुत भला लगा। किसी तरह की आहट न हो, इस ख़याल से मैं दबे पाँवों अपने कमरे में चला गया और बिस्तर पर जा बैठा। मैं बेहद ख़ुश था। यहाँ तक कि मेरे लिए सोना असम्भव हो रहा था। मुझे लगा जैसे कमरे में बड़ी गरमी है। वर्दी उतारे बिना मैं चुपचाप बाहर ड्योढ़ी में आ गया, ओवरकोट पहना और दरवाज़ा खोलकर बाहर निकल आया।

"लगभग पाँच बजे मैं नाच से लौटा था, और मुझे लौटे भी लगभग दो घण्टे हो चले थे। इसलिए जब मैं बाहर निकला, तो दिन चढ़ चुका था। मौसम भी बिल्कुल श्रोवटाइड के दिनों का-सा था - चारों तरफ़ धुँध छायी थी, सड़कों पर बर्फ़ पिघल रही थी और छतों से पानी की बूँदें टप-टप गिर रही थीं। उन दिनों ब. परिवार के लोग शहर के बाहर वाले हिस्से में रहा करते थे। उनका मकान एक खुले मैदान के सिरे पर था। दूसरे सिरे पर लड़कियों का एक स्कूल था। एक ओर लोगों के टहलने की

जगह थी। मैं अपने घर के सामने वाली छोटी-सी गली लाँघकर बड़ी सड़क पर आ गया। सड़क पर लोग आ-जा रहे थे। बर्फ़-गाड़ियों पर गाड़ीवान लकड़ी के तख़्ते लादे लिये जा रहे थे। गाड़ियों से गहरी लकीरें पड़ रही थीं। घोड़ों पर चमकते साज़ कसे थे। उनके गीले सिर एक लय में हिल रहे थे, गाड़ीवान कन्धों पर छाल की चटाइयाँ ओढ़े और बड़े-बड़े बूट चढ़ाये गाड़ियों के साथ-साथ कीचड़ में धीरे-धीरे चले जा रहे थे। मुझे हर चीज़ प्यारी और महत्त्वपूर्ण लग रही थी, यहाँ तक कि सड़क के दोनों तरफ़ खड़े घर भी, जो धुँध में बड़े ऊँचे नज़र आ रहे थे।

"मैं उस मैदान के पास जा पहुँचा, जहाँ उनका मकान था। मुझे वहाँ एक सिरे पर, जहाँ लोग टहलने जाया करते थे, कोई बड़ी और काली-सी चीज़ नज़र आयी। साथ ही ढोल और बाँसुरी की आवाज़ भी कानों में पड़ी। यों तो हर घड़ी मेरा मन ख़ुशी से नाचता रहा था और मज़ूर्का की धुन जब-तब मेरे कानों में गूँज रही थी, फिर भी यह संगीत कुछ अलग ही लगा - कर्कश और भद्दा-सा।

"'यह क्या हो सकता है?' मैंने सोचा। फिसलनी सड़क पर मैं उसी आवाज़ की दिशा में बढ़ा। कोई सौ क़दम जाने पर मुझे धुँध में लोगों की भीड़ नज़र आयी। बात साफ़ हुई। वे फ़ौजी सिपाही थे। मैंने सोचा कि सुबह की क़वायद कर रहे होंगे। मेरे साथ-साथ सड़क पर एक लोहार चला जा रहा था। वह एप्रन और जाकेट पहने था। कपड़ों पर जगह-जगह तेल के धब्बे थे। उसके हाथ में बड़ी-सी गठरी थी। मैं उसके साथ हो लिया। पास

जाकर मैंने देखा कि सैनिकों की दो क़तारें आमने-सामने खड़ी हैं। उन्होंने काले कोट पहन रखे हैं, उनके हाथों में बन्दूक़ें हैं और वे चुपचाप खड़े हैं। उनके पीछे एक बाँसुरी बजाने वाला और एक ढोल पीटने वाला है और वही कर्कश और भद्दी धुन बजा रहे हैं।

"हम रुक गये।

"'ये क्या कर रहे हैं?' मैंने लोहार से पूछा।

"'ऐ तातार को सज़ा दी जा रही है। उसने फ़ौज से भागने की कोशिश की थी,' लोहार ने ग़ुस्से से जवाब दिया और क़तारों के दूसरे सिरे की ओर आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगा।

"मैं भी उसी ओर देखने लगा। दो क़तारों के बीच कोई भयानक चीज़ हमारी ओर बढ़ती आ रही थी। वह एक आदमी था, कमर तक नंगा और उसके हाथ उसे ले जाने वाले दो सैनिकों की बन्दूक़ों के साथ बँधे हुए थे। उनके साथ-साथ ऊँचे-लम्बे क़द का एक अफ़सर चला आ रहा था। वह ओवरकोट पहने था और सिर पर फ़ौजी टोपी थी। यह अफ़सर मुझे परिचित-सा लगा। अपराधी की पीठ पर दोनों तरफ़ से हण्टर पड़ रहे थे। उसका शरीर काँप-काँप जाता और उसके पाँव पिघलती बर्फ़ में बार-बार धँस जाते। इस तरह वह धीरे-धीरे आगे को सरकता रहा। बीच-बीच में वह पीछे की ओर दुबक-सा जाता, तो दोनों फ़ौजी, जो बन्दूक़ों के साथ बाँधे हुए उसे ले जा रहे थे, उसे आगे को धकेल देते और जब वह आगे की ओर भहराने लगाता,

तो पीछे की ओर खींच लेते, ताकि वह गिरे नहीं। स्थिर क़दम रखता हुआ ऊँचे-लम्बे क़द का अफ़सर भी उनके साथ-साथ बढ़ता आ रहा था, ज़रा भी पीछे नहीं रहता था। मेरी नज़र उसके दमकते चेहरे, उजली मूँछों और क़लमों पर पड़ी। मैंने उसे फ़ौरन पहचान लिया - वह वारेन्का का बाप था।

"हण्टर के हर वार पर अपराधी का चेहरा दर्द से ऐंठ उठता, वह बेचैन होकर उस ओर देखता, जिधर से हण्टर पड़ा था और सफ़ेद दाँतों की झलक दिखाते हुए बार-बार कुछ शब्द दोहराता। मेरे नज़दीक आने पर ही ये शब्द मुझे ठीक तरह से सुनायी दिये। वह बोल नहीं, सिसक रहा था। जब वह मेरे नज़दीक पहुँचा, तो मैंने सुना, 'रहम करो, भाइयो।', 'भाइयो, कुछ रहम करो।' पर भाइयों को कोई रहम नहीं आ रहा था। वह ऐन मेरे सामने आ पहुँचा। एक सैनिक ने बड़ी दृढ़ता से आगे बढ़कर तातार की पीठ पर इतने ज़ोर से हण्टर मारा कि उसकी आवाज़ हवा में गूँज गयी। तातार आगे को गिरने वाला था, पर फ़ौजियों ने झटके से उसे थाम लिया। फिर दूसरी तरफ़ से एक हण्टर और पड़ा, इसके बाद फिर इस तरफ़ से, और फिर उस तरफ़ से। कर्नल उसके साथ-साथ चलता रहा। कभी वह अपने पाँवों की ओर देखता और कभी अपराधी की ओर। हवा में गहरी साँस लेता, गाल फुलाता और फिर धीरे-धीरे होंठ फैलाकर मुँह से हवा निकालता। जब यह जुलूस मेरे पास से निकल गया, तो मुझे क्षण-भर के लिए सैनिकों की क़तार के बीच से अपराधी की पीठ की झलक मिली। वह रंग-बिरंगी, गीली, लाल और

अस्वाभाविक थी। मुझे विश्वास न हुआ कि यह एक इन्सान का शरीर है।

"'हे भगवान!' मेरे पास खड़ा लोहार बुदबुदाया।

"जुलूस बढ़ता गया। उस गिरते-पड़ते, बार-बार दया की भीख माँगते इन्सान पर दोनों तरफ़ से कोड़े पड़ते गये। ढोल बजते गये, बाँसुरी में से वही तीखी धुन निकलती रही और रोबीला कर्नल उसी तरह रोब-दाब से अपराधी के साथ चलता गया। सहसा कर्नल रुक गया और तेज़ी से एक सैनिक की ओर बढ़ा।

"'मैं तुम्हें चखाऊँगा ढील दिखाने का मज़ा!' उसकी क्रोध-भरी आवाज़ मेरे कानों में पड़ी।

"उसने अपने मज़बूत, चमड़े के दस्ताने से लैस हाथ से नाटे-छोटे, दुबले-पतले सैनिक के मुँह पर तमाचे पर तमाचे जड़ने शुरु कर दिये, क्योंकि सैनिक का हण्टर तातार की लहूलुहान पीठ पर पूरे ज़ोर से नहीं पड़ा था।

"'नये हण्टर लाओ!' कर्नल ने चिल्लाकर कहा, मुड़ा और उसकी नज़र मुझ पर पड़ी। मुझे अनदेखा करते हुए उसने बड़े ग़ुस्से से त्योरी चढ़ाकर झट-से मेरी ओर पीठ कर ली। मुझे बड़ी शर्म महसूस हुई। मेरी समझ में न आया कि मुड़न्ँ तो किस ओर को? मुझे लगा कि जैसे मैं कोई घिनौना काम करते पकड़ा गया हूँ। मैं सिर झुकाये तेज़ चाल से घर लौट चला। रास्ते-भर मेरे कानों में ढोल और बाँसुरी की कर्कश आवाज़ गँूजती रही। 'रहम करो, भाइयो!' की दर्द-भरी कराहट और 'मैं तुम्हें चखाऊँगा

ढील दिखाने का मज़ा!' - कर्नल की ग़ुस्से और दम्भ से भरी चिल्लाहट कानों के पर्दे फाड़ती रही। मेरा दिल इस तरह दर्द से भर उठा कि मुझे मतली होने लगी, यहाँ तक कि मुझे बार-बार राह में ठिठकना पड़ा। रह-रहकर जी चाहता कि मैं क़ै कर किसी तरह इस दृश्य से उपजी घृणा को अपने अन्दर से बाहर निकाल दूँ। मुझे याद नहीं कि मैं कैसे घर पहुँचा और कैसे जाकर बिस्तर पर पड़ गया। पर ज्यों ही आँख लगने को हुई, वह दृश्य फिर मेरी आँखों के सामने घूमने लगा, सारी आवाज़ें फिर मुझे सुनायी देने लगीं और मैं उठकर पलंग पर बैठ गया।

"'हो न हो, ज़रूर कोई ऐसी बात है, जिसे वह आदमी जानता है, पर मैं नहीं जानता,' कर्नल के बारे में सोचते हुए मैंने मन ही मन कहा। 'अगर मैं भी वह जान जाता, जो वह जानता है, तो मैं भी वह समझ जाता, जो मैंने देखा है और शायद तब इस तरह मेरा दिल न दुखता। पर हज़ार चेष्टा करने पर भी वह बात मेरी समझ में नहीं आयी, जो वह कर्नल समझता था। नतीजा यह कि कहीं शाम को जाकर मेरी आँख लगी और सो भी तब, जब मैं एक मित्र के घर गया और मैंने अन्धाधुँध शराब पी ली।

"आप क्या समझते हैं कि मैंने इस दृश्य से कोई बुरा नतीजा निकाला? हरग़िज़ नहीं। मैं तो इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यदि वह सारा कृत्य ऐसे विश्वास के साथ और हर आदमी द्वारा आवश्यक मानकर किया गया है, तो कोई न कोई बात ऐसी ज़रूर है, जिसका पता बाक़ी सबको तो है, पर केवल मुझे नहीं। मैं भी इस रहस्य का भेद पाने की कोशिश करने लगा। पर वह

रहस्य मेरे लिए सदा रहस्य ही बना रहा। और चूँकि मैं उसे समझ नहीं पाया, इसलिए मैं फ़ौज में भर्ती भी नहीं हुआ, हालाँकि मैं फ़ौज की नौकरी करना चाहता था। वैसे फ़ौज की नौकरी ही क्या, मैं तो कोई और नौकरी भी नहीं कर पाया। बस, मैं कुछ भी नहीं बन पाया।"

"हम ख़ूब जानते हैं कि आप क्या कुछ बन पाये हैं," एक मेहमान बोला, "यह कहना ज़्यादा मुनासिब होगा कि अगर आप न होते, तो जाने कितने ही लोग कुछ न बन पाते।"

"यह तो बिल्कुल फ़िज़ूल-सी बात कही है आपने," इवान वसील्येविच ने सचमुच चिढ़कर कहा।

"ख़ैर, तो आपके प्रेम का क्या हुआ?" हमने पूछा।

"मेरा प्रेम? मेरे प्रेम को तो उसी दिन पाला मार गया। जब वह लड़की मुस्कुराती हुई सोच में डूब जाती, जैसा कि अक्सर उसके साथ होता था, तो मैदान में खड़ा कर्नल मेरी आँखों के सामने आ जाता। मैं सकपका उठता और मेरा दिल बेचैन होने लगता। होते-होते मैंने उससे मिलना छोड़ दिया और धीरे-धीरे मेरा प्रेम मर गया। ऐसी ही बातें कभी-कभी समूचे जीवन का रुख़ बदल देती हैं, और आप कहे जा रहे हैं कि परिस्थितियाँ ही सब कुछ करती हैं," उसने अन्त में कहा।

1903

(अनुवाद: भीष्म साहनी)